बदलाव की चिंगारी

अनुराग बेहार

हमारे देश में शिक्षकों के बारे में बहुत कुछ गलतफहमियां पनप चुकी हैं। लेकिन इसके बावजूद, यह दास्तान है राजस्थान और कर्नाटक राज्य के अध्ययन केन्द्रों के शिक्षकों के जीवन्त समूहों की, जिनमें ललक है खुद सीखने की और अपने बच्चों को सिखाने की। न उन्हें छुट्टियों की परवाह है, न समय की और न ही मौसम के मार की। बस, उन्हें चिन्ता है कि वे अपनी कक्षा में बच्चों को कैसे अच्छे तरीके से सीखा सकते हैं। देखिए, इस बात की मिसाल इस आलेख में।

मालपुरा के शिक्षकों का एक दल

बदलाव की चिंगारी किसी संस्थागत ढांचे के माध्यम से होती है जो बौद्धिक आदान–प्रदान और दक्षतावर्धन को बढ़ावा देती हुए कहीं न कहीं मूल्यों को बनाए रखने में मददगार होती है।

आइए, मालपुरा के शिक्षकों की एक दास्तान आपको सुनाता हूं। एक कमरा है, जो लगभग 20 फीट चौड़ा और 30 फीट लंबा है। उस कमरे में हम कुल मिलाकर लगभग 40 लोग होंगे, 34 सरकारी स्कूल के शिक्षक और 6 अवलोकनकर्ता। सभी ज़मीन पर बिछी दरी पर विराजमान थे।

बाहर धधकती हुई सपाट ज़मीन, कांटेदार बबूल की झुरमुट के दृश्य और तापमान 44 डिग्री सेल्सियस है। अंदर और भी ज्यादा गर्मी महसूस हो रही है– 50 डिग्री के माफ़िक। पंखे बेजान से हैं, वजह बिजली का न होना। जयपुर के दक्षिण में टोंक जिले के मालपुरा विकास खंड मुख्यालय की जनसंख्या लगभग 30,000 हज़ार होगी। मालपुरा के आसपास के गांवों और कस्बों के लोग इस भारी तपन को सहन करने के अभ्यस्त हैं, यही वजह है कि अन्य सभी को छोड़कर, मैं अकेला ही पसीने में तरबतर हुआ जा रहा हूं।

यहां, यह समूह सुबह के दस बजे एकत्र हो चुका है। ये लोग आसपास के गांवों और कस्बों से विकास खंड मुख्यालय पर आ चुके हैं। कुछेक लोग 50 किलोमीटर की यात्रा करके यहां पहुंचे हैं। इस दल के लोग छः छोटे समूहों में बंटकर काम में लगे हुए हैं। छोटे समूहों में एक पठन सामग्री बांटी गई, जो सूक्ष्मदर्शी के इस्तेमाल करने के तरीकों पर और इससे कैसे करामातों को खोजा जा सकता है, यह जानने पर आधारित है।

प्रत्येक छोटे समूह के पास एक सूक्ष्मदर्शी, कांच की पट्टी, रंजक आदि है साथ ही आलू, मिर्च और डबरे का पानी है, जिनकी स्लाईड बनानी है। तकरीबन 15 मिनट में पठन सामग्री पढ़ने के बाद कमरे में गतिविधि करने का जज्बा पैदा हो चुका है। आलू, मिर्ची वगैरह को महीन काट–काटकर उन्हें रंजक से रंगा जा रहा है और सूक्ष्मदर्शी को रोशनी की ओर घुमाया जा रहा है। जब बढ़िया स्लाईड बने, तो सूक्ष्मदर्शी में देखने के लिए थोड़ी धक्कम–धक्का

के चलते, दूसरे समूहों को बड़े गर्व से दिखाया जा रहा है। सूक्ष्मदर्शी में जो देखा उसके चित्र बनाए जा रहे हैं और पठन सामग्री में बने चित्रों से तुलना की जा रही है। डबरे के गंदे पानी में विभिन्न कोशिकीय संरचनाओं या तैरते–उतराते सूक्ष्म जीवों को पहचाना जा रहा है।

समूहों में जो करामाती स्लाइड्स बनाई, मैं उनका गवाह था और एक समूह से दूसरे समूह में अपने आपको खींचता हुआ जा रहा था। मैं यह देखकर विस्मित हूं कि उस भट्टी की माफिक तप रहे कमरे में लोग बड़े स्वच्छंद व धैर्य के साथ, अपनी ऊर्जा को बरकरार रखते हुए व्यस्त हैं। अलबत्ता, शिक्षकों की बैठक सुबह 10 से 12 बजे तक तय की गई थी मगर उन्होंने काम करना बंद नहीं किया। वे 12:45 के बाद तक भी अपनी गतिविधि को जारी रखे हुए थे।

अब वे कुछ समस्याओं के हल को लेकर एक गोल घेरे में बैठ चुके थे। शिक्षकों के बीच के ही गोयल और पाठक नामक दो शिक्षकों ने आगे की कार्यवाही का जिम्मा लिया। उन्होंने सत्र को बड़ी शिद्दत और बेहतर ढंग से समझाया। इस सत्र का मकसद था कि उन्होंने क्या सीखा और उसे बच्चों के साथ कक्षाओं में कैसे इस्तेमाल करें। लगभग 30 मिनट की गहन चर्चा में वे 12 बिंदुओं पर पहुंचे, कुछ खास जो विषय से संबंधित (रंजक ताज़े हों) थे और कुछ बुनियादी, मसलन आपसी सहयोग से गतिविधियां बेहतर रूप से सीखी जाती है।

मुझे उनके साथ 15 मिनट तक बातचीत करने का अवसर दिया गया था और इसके लिए वहां मुझे बैंगलूरु से पहुंचना था। सुबह 10:00 बजे प्रारंभ हुआ सत्र यहां तक कि बीच में बिना किसी चाय की छुट्टी के 1:30 पर खत्म हुआ। 46 डिग्री सेल्सियस तापमान की झुलसाने वाली गर्मी शिक्षकों के चेहरे पर दिखाई दे रही थी, उन्होंने अपने–अपने बैग उठाए और अपने दुपहिया वाहनों पर सवार होकर घर की ओर चल दिए।

मालपुरा विकास खंड में शिक्षकों के दो स्वैच्छिक मंचों का यह समूह है। यह समूह 2009 में बना था, जिसे शुरुआत में मेरे सहयोगी देवेंद्र ने संगठित किया था, जिसमें बाद के दिनों में शिक्षकों का स्वामित्व बढ़ता गया। मालपुरा विकास खंड में लगभग 800 शिक्षक हैं, जिनमें से इन दो स्वैच्छिक मंचों में लगभग 150 सरकारी स्कूल के शिक्षक हैं।

शिक्षक इन सत्रों में स्वैच्छिक रूप से भाग लेते हैं– न सरकार की ओर से न अधिकारी की ओर से आदेश होता है। यहां शिक्षक स्कूल समय के अलावा आकर भाग लेते हैं। जिस सत्र के बारे में मैंने बताया है, वह छुट्टी के दिन आयोजित किया गया था। अपने घरों से कोसों दूर, जहां सार्वजनिक यातायात की बदतर सुविधाओं के चलते, प्रतिकुल हालातों का सामना करते हुए, अपनी जेब से दुपहिया वाहनों के पेट्रोल का खर्च वहन करते हैं। न कोई सम्मान, न ही कोई ईनाम या पुरस्कार फिर भी इस मंच का हिस्सा बनते हैं।

मैंने उनसे एकमात्र सवाल पूछा और वह था –" आखिर छुट्टी के दिन अपनी जेब से पैसा खर्च करके, झुलसाने वाली गर्मी में, जहां किसी ने आने को कहा नहीं है और कोई पुरस्कार भी नहीं मिल रहा है आप लोग क्यों आते हैं?" दरअसल, वे महीने में दो बार इस मंच की बैठक में आते हैं।

मेरे काम में, मुझे यह सौभाग्य मिला है कि मैं आए दिनों में पूरे देश में इस तरह के लोगों से मिलता रहता हूं। अपने सवाल का जो जवाब मैंने मालपुरा में सुना, वही मैंने पूरे देश में सुना वह सरल सा कुछ इस प्रकार है–"हम यहां इसलिए आते हैं क्योंकि हम कुछ सीखना चाहते हैं ताकि अपने विद्यार्थियों को बेहतरी से सिखा सकें।

उल्लेखनीय है कि राजस्थान के दो जिलों में ऐसे 15 शिक्षकों के मंच हैं, जिसमें 800 शिक्षक सदस्य हैं, जो इन दो जिलों की सरकारी शिक्षकों की तादाद का

15 फीसदी हैं। पूरे देश में हम सैकड़ों की तादाद में इस प्रकार के समूहों में शामिल हैं और इनमें से कई मंच संभवतः दूसरे संगठनों के द्वारा संचालित होते हैं, जिनमें सरकारी निकाय शामिल हैं।

ज़ाहिर है कि लोगों में जिनमें से ये शिक्षक ही हैं, उनमें बहुत अच्छाइयां हैं, जो बहु संख्या में शिक्षा में अनवरत रूप से सुधार के केंद्र में हैं। बदलाव की चिंगारी किसी संस्थागत ढांचे के माध्यम से होती है जो अनवरत रूप से बौद्धिक आदान–प्रदान और दक्षतावर्धन को समर्थन देती है साथ ही कहीं न कहीं मूल्यों को बनाए रखने में और आपस में जोड़कर रखती है।

आइए, भला–बुरा कहने के बजाय, समर्थन और सहयोग में इन महिलाओं और पुरुषों के इस सहयोग में हम भागीदार बनें। ये वे लोग हैं, जो आशा की किरण जगाए हुए हैं। हालांकि यह यात्रा लंबी और कठिन ज़रूर है।

सुरपुर के शोले

सुरपुर का अध्ययन केंद्र दर्शाता है कि कैसे बौद्धिक विनिमय एवं सामाजिक समर्थन को बढ़ावा देने वाली देशज व संजीदा बिरादरी का सृजन किया जा सकता।

यह बात केंबावी अध्ययन केन्द्र की है, जहां यह चर्चा चल रही थी। शिक्षकों का एक समूह अध्ययन केंद्र पर एकत्र होकर कंप्यूटर की बदहाली को लेकर शिकवा–शिकायत कर रहा था। मैं यह सुनकर भाव विभोर हो रहा था कि उनकी शिकायत की वजह थी कंप्यूटर में फिल्म बनाने का साफ्टवेअर काम नहीं कर रहा था। दरअसल, उन शिक्षकों में से कुछ फिल्म बनाना, संपादित करना और उसमें अपनी आवाज़ देना चाह रहे थे।

अध्ययन केंद्र में जो शिक्षक आए थे, सभी के सभी सरकारी स्कूलों के थे जो केंबावी के आसपास के थे। जब उनकी शिकायत का दौर पूरा हो गया, तो मैंने पूछा–"आप लोग फिल्म का निर्माण अपने छात्रों के लिए क्यों नहीं करते? जिस घटना का बयान कर रहा हूं, वह जनवरी महीने की है।

केंबावी, तहसील सुरपुर मुख्यालय से लगभग 30 किलोमीटर की दूरी पर है, जो उत्तर–पूर्वी कर्नाटक के यादगिर जिले में पड़ता है। यह क्षेत्र छत्तीसगढ़, उड़िसा या राजस्थान के वंचित भाग से कोई अलग नहीं है। अधिकांश लोग कर्नाटक की छवि में बैंगलुरु की चकाचौंध या कुर्ग की निर्बल एवं सुस्त रियासत से प्रभावित हैं, उन्हें उत्तर–पूर्वी कर्नाटक एक अलग ही देश के माफिक लगेगा। उत्तर–पूर्वी कर्नाटक के जिले, देश में वंचित जिलों की फेहरिस्त में आते हैं, जो मानव और सामाजिक विकास सूचकांक के आधार पर आकलित किए जाते हैं।

बहरहाल, मैं सुरपुर जून महीने में फिर से गया। भरी गर्मी में, वहां का परिदृश्य खतरनाक हो गया था। चारों ओर चट्टानी पहाड़ियां, आपको लगेगा मानो झुलसाने वाले शोले हों। सरकारी उर्दू प्राथमिक स्कूल के, पहली मंजिल पर मुझे ले जाया गया। इस स्कूल के एक कमरे में सुरपुर का अध्ययन केंद्र चलता है। यह स्कूल चट्टानी पहाड़ियों के बीच में है। एक पुरानी हवेली, दूसरे मकान से जुड़ी हुई है, जिसमें दो नए कमरे हैं, और इसी में स्कूल चलता है। भूल–भूलैया के रास्ते से छोटे–छोटे दरवाज़ों से होते हुए ऊंची–नीची सीढ़ियों को पार करते हुए स्कूल तक जाना पड़ता है।

अध्ययन केंद्र में घुप्प अंधेरा था। दरअसल, एक फिल्म के प्रदर्शन के लिए अंधेरा किया गया था। कमरा शिक्षकों और मेरे साथियों से खचाखच भरा था। मेरे साथी मित्र उमाशंकर, जो मेरे साथ इस यात्रा मे थे, उन्होंने यह बात मुझसे पिछले छः महीनों से छिपाकर रखी थी। फिल्म प्रदर्शन की डेढ़ घंटे की घटना जैसे–जैसे आगे बढ़ रही थी कि मेरे साथ बैठे उमाशंकर आनंद और जोरशोर से खिलाखिला रहे थे।

मुझे बताया गया कि जब मैं जनवरी में यहां आया था और मैंने बच्चों की फिल्म बनाने का विचार

उनके सामने रखा था, उसे इन लोगों ने एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया और दरअसल यही वे मुझे बताने जा रहे थे। किसी बैठक में कही गई बात को चुनौती के रूप में लेना, यह उनके व्यवहार और संवेदनशीलता को दर्शाता है।

वहां पर मुझे पांच फिल्में दिखाई गईं। प्रत्येक फिल्म सीधे–सीधे बच्चों के पाठ्यक्रम पर बनाई गई थी, जिसमें वे स्कूल में पढ़ा रहे थे। प्रत्येक फिल्म 4–5 मिनट की थी जो छोटे और सस्ते डिजिटल कैमरों से बनाकर अध्ययन केंद्र पर संपादित की गई थी। ये फिल्में पानी की कमी, कुम्हारी और परिवहन के विभिन्न तरीकों पर आधारित थी। इतना ही नहीं इन फिल्मों में एक छोटी एनिमेटेड कहानी भी थी, जो उन्होंने ही बनाई थी।

जो फिल्में बनाई गई, वे उम्दा थी। बेहतरी से सोचकर स्क्रिप्ट तैयार की गई, बढ़िया शॉट, बढ़िया आवाज़, संगीत और बहुत हद तक पेशेवर संपादन। इस बात पर भरोसा करना मुश्किल हो रहा था कि ये फिल्में सरकारी स्कूल के चंद शिक्षकों ने मिलकर बनाई है, जो सूरपुर के आसपास के गांवों और कस्बों में रहते हैं।

शिक्षकों में काफ़ी उत्साह था। शिक्षक जिनके बारे में हमारे देश में बहुत कुछ गलतफहमियां पनप चुकी हैं, वे फिल्म निर्माता बन चुके हैं। उनमें से प्रत्येक शिक्षक बता रहे थे कि फिल्में, कैसे उन्हें कक्षा शिक्षण में मदद कर रही हैं। वे बता रहे थे कि परिवहन वाला पाठ जो 45 मिनट के दो पीरियड़ में पढ़ाया जा रहा था, अब उसे फिल्म की मदद से प्रभावशाली ढंग से एक पीरियड में ही पूरा किया जाता है। फिल्म में मिट्टी के बर्तन बनाने की जटिलता, जिसमें मिट्टी इकट्ठा करने से लगाकर, बर्तनों को पकाने तक की प्रक्रिया सब कुछ देखने को था। गांव के कुछ तालाबों की आपस में तुलना, पानी की कमी के कारण, जीवंत रूप से समझ में आ रहे थे। इसी प्रकार की कई बातें फिल्मों के माध्यम से समझ में आ रही थी। फिल्म शो के बाद उन्होंने अपनी योजनाओं पर विमर्श किया कि कैसे अधिक से अधिक शिक्षकों और बच्चों को इसमें शामिल किया जाए।

फिल्में अपने आप में बढ़िया थीं, मगर शिक्षकों पर उनका असर कही अधिक गहरा और निराला था। फिल्म निर्माण की प्रक्रिया ने, शिक्षकों में एक आत्मविश्वास और जज्बा पैदा कर दिया था जो कहीं अधिक मायने रखता है। उन्होंने पाठ्यक्रम का जिम्मा अपने ऊपर ले लिया है, जो अमूमन शिक्षाविदों की इच्छा पर निर्भर करता है। यह शिक्षकों की दक्षता संवर्धन की प्रभावशाली कवायद है जो मैंने देखी। तटस्थ होकर देखें, तो सचमुच टेक्नोलजी के कुछ प्रभावशाली इस्तेमाल में से यह भी एक तरीका है, जो अपने देश में मैंने वास्तविक होते देखा, जो तमाशा बनने के बजाय सही शिक्षा को आगे ले जाए।

मगर मेरा यह कहना है कि हम कहीं डिजिटल कैमरा वितरित करना शुरू न कर दें। यहां जो कुछ भी (और भी बहुत कुछ) हुआ है, वह अध्ययन केंद्र द्वारा सृजित, अनवरत संस्थाई जगह की बदौलत है, जो इस मसले का केंद्र है। हमारा तंत्र, शिक्षकों और अन्यों के लिए संस्थाई कड़ापन, सुपर केंद्रिकृत संरचना, दृष्टिकोण और इसी प्रकार का व्यवहार, उदासीनता, उपेक्षा और अप्रासंगिकता पैदा करता है। अध्ययन केंद्र इस व्यवस्था को नेस्तानाबूत करते हुए, देशज एवं जीवंत समाज में बौद्धिक आदान–प्रदान और सामाजिक समर्थन का सृजन करता है, जो कि बहुत कुछ हमारी व्यवस्था का हिस्सा रहे हैं।

इतना तो है कि इसमें बहुत समय लगेगा। सुरपुर की बात करें, तो यहां तक पहुंचने में आठ साल लगे हैं। इस मिसाल से यह साबित होता है कि शिक्षा में सुधार छोटे रास्ते से नहीं होता।

अज़ीम प्रेमजी फाण्डेशन के सीईओ तथा अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी के वाइस चांसलर हैं।
अंग्रेज़ी से अनुदित– कालू राम शर्मा, अज़ीम प्रेमजी फाण्डेशन, देहरादून (उत्तराखण्ड) में कार्यरत।